International Journal Of Multi Research

Online ISSN: 3107 - 7676

IJMR 2026; 2(4): 135-138

2026 July - August

www.allmultiresearchjournal.com

Received: 20-06-2026

Accepted: 22-07-2026

Published: 12-08-2026

DOI: https://doi.org/10.54660/IJMR.2026.2.4.135-138

वाल्मीकि रामायण में ब्रह्मतत्त्व : एक शोधपरक अध्ययन

रामानुज [1], डॉ. रेनू शुक्ला [2]

[1] पी.एच–डी. संस्कृत, डॉ. सी. व्ही. रमन विश्वविद्यालय करगीरोड, कोटा, बिलासपुर, छत्तीसगढ, भारत

[2] सहायक प्राध्यापक, डॉ. सी. व्ही. रमन विश्वविद्यालय करगीरोड, कोटा, बिलासपुर, छत्तीसगढ, भारत

Corresponding Author; **रामानुज**

सारांश

भारतीय संस्कृति एवं दर्शन के विकास में रामायण का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित रामायण केवल एक आदर्श चरित्र–कथा नहीं, बल्कि भारतीय जीवन–दर्शन, धर्म, नीति, अध्यात्म और ब्रह्मविद्या का भी महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है। रामायण में ब्रह्मतत्त्व प्रत्यक्ष दार्शनिक विवेचन के साथ–साथ कथा, चरित्र और जीवन–मूल्यों के माध्यम से अभिव्यक्त हुआ है। श्रीराम के चरित्र में मानवीय मर्यादा और दिव्य सत्ता का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है। वे एक ओर आदर्श पुत्र, पति, भाई, मित्र और राजा हैं, तो दूसरी ओर भारतीय धार्मिक परंपरा में परमब्रह्म के अवतार के रूप में प्रतिष्ठित हैं। प्रस्तुत शोध–आलेख में रामायण के संदर्भ में ब्रह्म की अवधारणा, श्रीराम के ब्रह्मस्वरूप, जीव–जगत्–ब्रह्म के संबंध तथा भक्ति, ज्ञान और धर्म के माध्यम से ब्रह्मतत्त्व की अभिव्यक्ति का अध्ययन किया गया है।

कूट शब्द : रामायण, ब्रह्मतत्त्व, श्रीराम, ब्रह्म, आत्मा, धर्म, भक्ति, ज्ञान, अवतारवाद।

1. प्रस्तावना

भारतीय वाङ्मय परंपरा में रामायण का स्थान केवल एक महाकाव्य के रूप में नहीं, बल्कि धर्म, दर्शन, नीति, अध्यात्म और आदर्श जीवन–पद्धति के महत्त्वपूर्ण ग्रंथ के रूप में है। महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित रामायण में श्रीराम के जीवन के माध्यम से सत्य, धर्म, कर्तव्य, त्याग, आत्मसंयम, लोककल्याण और मानवीय मर्यादा का चित्रण हुआ है। इस दृष्टि से रामायण भारतीय चिंतन में मनुष्य और परम सत्ता के संबंध को समझने का एक महत्त्वपूर्ण माध्यम बन जाती है।

रामायण के आरंभ में ही महर्षि वाल्मीकि नारद से ऐसे पुरुष के विषय में प्रश्न करते हैं जिसमें श्रेष्ठ मानवीय गुणों का समन्वय हो। वे पूछते हैं–

"कः न्वस्मिन् साम्प्रतं लोके गुणवान् कश्च वीर्यवान?"

अर्थात् वर्तमान संसार में ऐसा कौन पुरुष है जो गुणवान, वीर्यवान, धर्मज्ञ, सत्यवादी तथा दृढ़व्रती है? नारद इसके उत्तर में श्रीराम का चरित्र प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार रामायण का प्रारंभ ही ऐसे आदर्श पुरुष की खोज से होता है, जिसमें मानवीय गुण अपनी चरम पूर्णता तक पहुँचते हैं [1]।

वाल्मीकि रामायण के बालकाण्ड के प्रथम सर्ग में श्रीराम को धर्मज्ञ, सत्यसंध, प्रजाहित में रत, ज्ञानसम्पन्न, शुचि, संयमी और समाधिमान बताया गया है –

"धर्मज्ञः सत्यसन्धश्च प्रजानां च हिते रतः [2]।

इससे स्पष्ट होता है कि राम का व्यक्तित्व केवल राजकीय शक्ति पर आधारित नहीं है, बल्कि धर्म और आत्मसंयम पर आधारित है। यही गुण आगे चलकर राम के ब्रह्मस्वरूप की दार्शनिक व्याख्या के आधार बनते हैं।

2. ब्रह्मतत्त्व की अवधारणा

भारतीय दर्शन में 'ब्रह्म' परम सत्य और समस्त अस्तित्व के मूल तत्त्व के रूप में प्रतिष्ठित है। 'ब्रह्म' शब्द संस्कृत की 'बृह' धातु से निर्मित माना जाता है, जिसका मूल अर्थ विस्तार या महानता से संबंधित है। उपनिषदों में ब्रह्म को सामान्य इंद्रिय और मन–बुद्धि की सीमाओं से परे परम तत्त्व माना गया है।

तैत्तिरीय उपनिषद् में ब्रह्म का प्रसिद्ध स्वरूप इस प्रकार दिया गया है–

"सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म" अर्थात् ब्रह्म सत्य, ज्ञान और अनन्त स्वरूप है [3]।

बाद की वेदान्तीय परंपरा में ब्रह्म के लिए 'सच्चिदानन्द' की संकल्पना अत्यंत प्रसिद्ध हुई। यहाँ सत् का अर्थ परम अस्तित्व, चित् का अर्थ परम चेतना और आनन्द का अर्थ परम परमानंद से लिया जाता है।

रामायण में ब्रह्मतत्त्व को उपनिषदों की तरह व्यवस्थित दार्शनिक सिद्धांत के रूप में प्रस्तुत नहीं किया गया है। वाल्मीकि का मुख्य उद्देश्य राम के जीवन और चरित्र का आख्यान है। फिर भी राम के चरित्र में सत्य, धर्म, आत्मसंयम, ज्ञान और लोककल्याण जैसे वे गुण दिखाई देते हैं, जिन्हें भारतीय आध्यात्मिक चिंतन में उच्चतम नैतिक और आध्यात्मिक अवस्था से जोड़ा गया है। अतः रामायण में ब्रह्मतत्त्व को प्रत्यक्ष दार्शनिक प्रतिपादन की अपेक्षा चरित्र और आचरण में अभिव्यक्त आध्यात्मिक तत्त्व के रूप में देखना अधिक उपयुक्त है।

3. श्रीराम का आदर्श मानवीय स्वरूप

वाल्मीकि रामायण में श्रीराम का प्रारंभिक परिचय एक आदर्श मानव के रूप में मिलता है। नारद द्वारा बताए गए राम के गुणों में गुणवान, वीर्यवान, धर्मज्ञ, कृतज्ञ, सत्यवाक्य, दृढ़व्रती, चरित्रवान, सर्वभूतहितैषी, विद्वान, समर्थ, आत्मवान और जितक्रोध आदि प्रमुख हैं [4]।

इन गुणों का महत्त्व केवल नैतिकता तक सीमित नहीं है। भारतीय दर्शन में आत्मसंयम को आध्यात्मिक विकास का आवश्यक आधार माना गया है। राम का 'आत्मवान' होना और 'जितक्रोध' होना उनके अंतर्मन पर नियंत्रण को सूचित करता है। वे परिस्थितियों के अनुसार क्रोध, मोह अथवा व्यक्तिगत स्वार्थ से संचालित नहीं होते।

इसका सर्वोत्तम उदाहरण वनवास की घटना है। जब कैकेयी के वरदानों के कारण राम को चौदह वर्ष का वनवास मिलता है, तब वे राजसिंहासन और सुख–सुविधाओं का त्याग कर पिता की आज्ञा स्वीकार करते हैं। यहाँ राम का व्यक्तित्व 'धर्म' को व्यक्तिगत सुख से ऊपर रखने वाले आदर्श पुरुष का स्वरूप ग्रहण करता है। इस प्रकार राम का ब्रह्मतत्त्व उनके व्यवहार में सत्य और धर्म की सर्वोच्च प्रतिष्ठा के रूप में दिखाई देता है।

4. श्रीराम का दिव्य अथवा अवतारी स्वरूप

रामायण के बालकाण्ड में राम के दिव्य स्वरूप की स्थापना का महत्त्वपूर्ण प्रसंग आता है। रावण के अत्याचार से पीड़ित देवता ब्रह्मा के पास जाते हैं। तब विष्णु वहाँ उपस्थित होते हैं और रावण के विनाश के लिए मानव रूप में अवतार लेने का संकल्प करते हैं। बालकाण्ड, सर्ग 15 में विष्णु के आगमन और दशरथ के पुत्र के रूप में अवतार लेने की योजना का वर्णन मिलता है [5]।

वाल्मीकि रामायण के अनुसार विष्णु दशरथ को अपना पिता बनाने के लिए स्वयं को चार रूपों में प्रकट करने के लिए तैयार होते हैं– "आत्मानं चतुर्विधं कृत्वा पितरं रोचयामास तदा दशरथम् "[6]।

यह प्रसंग राम के दिव्य स्वरूप की स्थापना में अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। यहाँ राम केवल एक सामान्य राजकुमार नहीं हैं। उनका जन्म एक व्यापक दैवी प्रयोजन से जुड़ा हुआ है। रावण के अत्याचार से संसार और देवताओं की रक्षा करना तथा धर्म की पुनर्स्थापना करना।

इस संदर्भ में राम के व्यक्तित्व में दो स्तर दिखाई देते हैं–मानवीय और दैवी। वे मनुष्य के रूप में जन्म लेते हैं, मनुष्य के दुःख–सुख का अनुभव करते हैं और मानव समाज में मर्यादित जीवन जीते हैं; दूसरी ओर, उनका जन्म विष्णु के अवतार के रूप में धर्म–संरक्षण के दैवी उद्देश्य से जुड़ा है।

5. जीव, जगत् और ब्रह्म का संबंध

भारतीय दर्शन में जीव, जगत् और ब्रह्म के संबंध का प्रश्न अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। उपनिषदों में ब्रह्म को परम सत्य तथा समस्त जगत् के आधार के रूप में स्वीकार किया गया है। जीव उस चेतन सत्ता का अनुभवकर्ता है, जबकि जगत् वह दृश्य संसार है जिसमें जीव अपने कर्मों का निर्वाह करता है। विभिन्न दार्शनिक परंपराओं–अद्वैत, विशिष्टाद्वैत और द्वैत ने जीव तथा ब्रह्म के संबंध की अलग–अलग व्याख्या की है। रामायण में इस संबंध का कोई स्वतंत्र दार्शनिक सूत्रीकरण नहीं मिलता, किंतु कथा और चरित्रों के माध्यम से जीव और ईश्वर के संबंध का अत्यंत प्रभावशाली चित्रण अवश्य मिलता है।

वाल्मीकि रामायण में श्रीराम एक ओर दशरथ के पुत्र, पति, भाई और राजा हैं, तो दूसरी ओर विष्णु के अवतार के रूप में प्रतिष्ठित हैं। बालकाण्ड में देवताओं की प्रार्थना के पश्चात् विष्णु द्वारा रावण–वध के लिए मानव रूप में अवतार लेने का प्रसंग आता है। इससे राम के मानवीय और दैवी दोनों रूपों का आधार प्राप्त होता है [7]।

राम और उनके भक्त पात्रों का संबंध इसी द्विस्तरीय स्वरूप को स्पष्ट करता है। हनुमान, भरत और लक्ष्मण राम के प्रति केवल राजनीतिक अथवा पारिवारिक निष्ठा नहीं रखते, बल्कि उनके जीवन में गहरी श्रद्धा, समर्पण और आध्यात्मिक विश्वास दिखाई देता है।

विशेष रूप से हनुमान का चरित्र जीव और ईश्वर के संबंध को समझने का महत्त्वपूर्ण माध्यम है। हनुमान अपनी शक्ति का उपयोग व्यक्तिगत प्रतिष्ठा के लिए नहीं, बल्कि राम के कार्य की सिद्धि के लिए करते हैं। किष्किन्धाकाण्ड में जब राम और लक्ष्मण से उनका परिचय होता है, तब वे उनके व्यक्तित्व, वाणी और उद्देश्य को समझकर उनके साथ संबंध स्थापित करते हैं [8]। आगे चलकर राम के कार्य में स्वयं को पूर्णतः समर्पित कर देते हैं।

सुंदरकाण्ड में हनुमान का सीता की खोज के लिए समुद्र लाँघकर लंका पहुँचना इसी समर्पण का चरम उदाहरण है। सीता के सामने वे स्वयं को राम का दूत बताते हैं और राम की कथा तथा उनके गुणों का वर्णन करते हैं। वाल्मीकि रामायण, सुंदरकाण्ड, सर्ग 35 में हनुमान द्वारा राम के स्वरूप, गुण, सत्यनिष्ठा और धर्मपालन का विस्तृत वर्णन मिलता है [9]।

यहाँ 'दूत' होना मात्र राजनीतिक संदेशवाहक होना नहीं है। हनुमान के लिए राम का कार्य ही उनका जीवन–कार्य बन जाता है। किष्किन्धाकाण्ड में भी राम के कार्य को पूरा करने के लिए हनुमान की सामर्थ्य पर विश्वास व्यक्त किया गया है। इस प्रकार जीव और ईश्वर के संबंध को भक्तिभाव की दृष्टि से देखें तो हनुमान जीव की उस अवस्था का प्रतिनिधित्व करते हैं जिसमें व्यक्ति अपनी व्यक्तिगत सत्ता को ईश्वर की सेवा में समर्पित कर देता है। यहाँ अहंकार का स्थान सेवा ले लेता है और व्यक्तिगत सामर्थ्य ईश्वर के कार्य का साधन बन जाती है।

6. हनुमान और भक्तितत्त्व

रामायण में भक्तितत्त्व का सर्वाधिक प्रभावशाली चरित्र हनुमान का है। यद्यपि वाल्मीकि रामायण में बाद की भक्तिपरंपरा के समान व्यवस्थित 'भक्ति–दर्शन' प्रस्तुत नहीं किया गया है, फिर भी हनुमान का संपूर्ण चरित्र सेवा, निष्ठा, साहस और समर्पण की दृष्टि से भक्तितत्त्व की आधारभूमि तैयार करता है।

हनुमान की भक्ति का सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष सेवा है। वे राम के प्रति श्रद्धा को केवल भावनात्मक स्तर पर नहीं रखते, बल्कि उसे कर्म में परिणत करते हैं। सीता की खोज, लंका में प्रवेश, रावण के समक्ष राम का संदेश प्रस्तुत करना और युद्ध में राम की सहायता करना इन सभी घटनाओं में उनका उद्देश्य रामकार्य की सिद्धि है।

सुंदरकाण्ड में हनुमान का लंका जाना इस दृष्टि से विशेष महत्त्वपूर्ण है। वे कठिन परिस्थितियों से गुजरते हुए सीता तक पहुँचते हैं। सीता को राम की पहचान कराने के लिए वे राम के गुणों का वर्णन करते हैं और अंततः राम की मुद्रिका प्रस्तुत करते हैं। इससे उनका दूतत्व विश्वास और भक्ति दोनों का रूप ग्रहण करता है [10]।

हनुमान के चरित्र में निष्काम कर्म का तत्त्व भी देखा जा सकता है। वे अपने पराक्रम का श्रेय स्वयं नहीं लेते। उनका पराक्रम किसी व्यक्तिगत स्वार्थ से प्रेरित नहीं है। राम के कार्य की सिद्धि ही उनके लिए सर्वोच्च उद्देश्य है।

किष्किन्धाकाण्ड में सीता की खोज के लिए हनुमान को विशेष रूप से निर्देश दिया जाता है और उनकी शक्ति पर विश्वास व्यक्त किया जाता है–

"अतिबल... अहं तव बलमाश्रितः..."

अर्थात् तुम्हारी शक्ति और पराक्रम पर मेरा भरोसा है [11]।

हनुमान की भक्ति का एक अन्य महत्त्वपूर्ण पक्ष बुद्धि और विवेक है। वे केवल शक्तिशाली नहीं, बल्कि अत्यंत बुद्धिमान और परिस्थितियों के अनुसार निर्णय लेने वाले पात्र हैं। लंका में सीता की खोज करते समय वे अपने विशाल रूप का प्रदर्शन करने के स्थान पर सूक्ष्म रूप धारण करते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि भक्ति विवेक–विहीन भावुकता नहीं है; सच्ची सेवा में बुद्धि, संयम और परिस्थिति–बोध भी आवश्यक हैं। अतः हनुमान का चरित्र यह स्थापित करता है कि भक्ति का वास्तविक स्वरूप केवल उपासना नहीं, बल्कि सेवा, समर्पण, विवेक और कर्तव्यपालन है।

7. ज्ञान और ब्रह्मतत्त्व

रामायण में ज्ञान को केवल शास्त्र–अध्ययन के अर्थ में ग्रहण करना उचित नहीं होगा। ज्ञान का वास्तविक मूल्य तब है जब वह व्यक्ति के आचरण में सत्य, धर्म और विवेक उत्पन्न करे। इस दृष्टि से रामायण के अनेक पात्र ज्ञान के विभिन्न स्तरों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

श्रीराम स्वयं वेद–वेदांग, राज्यनीति, धनुर्वेद और धर्म के ज्ञाता के रूप में वर्णित हैं। सुंदरकाण्ड में हनुमान जब सीता को राम के गुण बताते हैं, तब राम को वेदों के ज्ञाता, इंद्रियनिग्रह करने वाले तथा सत्य और धर्म में स्थित पुरुष के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

यहाँ ज्ञान और आचरण का संबंध विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है। राम के लिए ज्ञान केवल बौद्धिक उपलब्धि नहीं है। वे अपने ज्ञान को जीवन में लागू करते हैं। पिता के वचन की रक्षा के लिए राज्य का त्याग इसका सबसे बड़ा उदाहरण है। ज्ञान की इसी व्यावहारिकता को ब्रह्मतत्त्व से जोड़ा जा सकता है। यदि ब्रह्म को परम सत्य माना जाए, तो उस सत्य का ज्ञान व्यक्ति में सत्यनिष्ठा, संयम और धर्मबोध के रूप में प्रकट होना चाहिए। इस दृष्टि से राम का जीवन ज्ञान के व्यावहारिक पक्ष का उदाहरण है।

रामायण में ऋषि–मुनियों का महत्त्व भी इसी कारण है। वे केवल तपस्वी नहीं, बल्कि धर्म और सत्य के मार्गदर्शक हैं। राम उनके आश्रमों में जाते हैं और उनके साथ संवाद करते हैं। इस प्रकार रामायण में ज्ञान का स्वरूप अनुभव, विवेक, धर्म और आत्मसंयम से संयुक्त है।

8. रावण और ब्रह्मतत्त्व का विरोधी पक्ष

रामायण में रावण का चरित्र ज्ञान और शक्ति के दुरुपयोग का अत्यंत प्रभावशाली उदाहरण है। रावण तपस्वी है, विद्वान है और अत्यंत शक्तिशाली है; किंतु उसके चरित्र में अहंकार, काम, क्रोध और स्वेच्छाचारिता प्रमुख हो जाते हैं। इस कारण उसका ज्ञान उसके नैतिक पतन को रोक नहीं पाता। यहाँ एक महत्त्वपूर्ण दार्शनिक प्रश्न सामने आता है– क्या केवल ज्ञान मनुष्य को श्रेष्ठ बना सकता है? रामायण का उत्तर नकारात्मक प्रतीत होता है। ज्ञान तभी सार्थक है जब वह विवेक और धर्म से संयुक्त हो।

रावण को अनेक अवसरों पर उचित परामर्श दिया जाता है। मारीच उसे सीता–हरण के परिणामों के प्रति सावधान करता है। बाद में विभीषण भी उसे सीता को राम को लौटा देने और युद्ध से बचने की सलाह देता है। किंतु रावण अपने अहंकार के कारण उचित सलाह स्वीकार नहीं करता। युद्धकाण्ड, सर्ग 16 में विभीषण के हितकारी वचन पर रावण की कठोर प्रतिक्रिया का वर्णन मिलता है [12]।

विभीषण का परामर्श केवल राजनीतिक सलाह नहीं है। वह धर्म और अधर्म के विवेक पर आधारित है। किंतु रावण का अहंकार उसे सत्य स्वीकार करने से रोकता है। इसीलिए उसका ज्ञान आत्मविनाश का कारण बन जाता है। रावण और राम का तुलनात्मक अध्ययन इस तथ्य को और स्पष्ट करता है। दोनों शक्तिशाली हैं, दोनों युद्धकला में समर्थ हैं और दोनों के पास ज्ञान का आधार है; किंतु दोनों के जीवन–मूल्य अलग हैं। राम के लिए शक्ति धर्म की रक्षा का साधन है, जबकि रावण की शक्ति अहंकार और स्वार्थ की पूर्ति का साधन बन जाती है।

इस प्रकार राम और रावण का संघर्ष केवल दो राजाओं अथवा दो योद्धाओं का संघर्ष नहीं है। दार्शनिक दृष्टि से यह धर्म और अधर्म, विवेक और अविवेक, आत्मसंयम और अहंकार तथा लोककल्याण और स्वार्थ के बीच संघर्ष का प्रतीक बन जाता है।

9. रामराज्य और ब्रह्मतत्त्व

रामराज्य भारतीय सांस्कृतिक चेतना में आदर्श शासन व्यवस्था का प्रतीक बन चुका है। वाल्मीकि रामायण में राम के अयोध्या लौटने और राज्याभिषेक के पश्चात् उनके शासन का वर्णन आता है। उत्तरकाण्ड में राम के दीर्घकालीन शासन तथा प्रजा की स्थिति का उल्लेख मिलता है।

ब्रह्मतत्त्व की दृष्टि से रामराज्य की महत्ता इसलिए है कि यहाँ आध्यात्मिक मूल्यों को सामाजिक जीवन से जोड़ा जाता है। सत्य, धर्म, न्याय, संयम और करुणा यदि केवल व्यक्ति के निजी जीवन तक सीमित रहें तो उनका प्रभाव सीमित होता है; किंतु जब वही मूल्य शासन और सामाजिक व्यवस्था के आधार बनते हैं, तब उनका व्यापक लोककल्याणकारी स्वरूप सामने आता है।

रामराज्य की अवधारणा में राजा और प्रजा के संबंध का नैतिक पक्ष भी महत्त्वपूर्ण है। राजा का जीवन व्यक्तिगत इच्छाओं से नियंत्रित न होकर राजधर्म से नियंत्रित होना चाहिए। इस अर्थ में राम का आदर्श शासन उस विचार को व्यक्त करता है कि सत्ता का अंतिम उद्देश्य लोकमंगल होना चाहिए। आधुनिक संदर्भ में भी रामराज्य की संकल्पना को न्यायपूर्ण, उत्तरदायी और नैतिक शासन के आदर्श के रूप में समझा जा सकता है। आधुनिक लोकतांत्रिक राज्य की संस्थाएँ प्राचीन राजतंत्र से भिन्न हैं, फिर भी सत्य, न्याय, उत्तरदायित्व और लोककल्याण जैसे मूल्यों की प्रासंगिकता बनी रहती है।

10. निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि रामायण में ब्रह्मतत्त्व बहुस्तरीय रूप में विद्यमान है। प्रथम स्तर पर श्रीराम आदर्श मानव हैं– गुणवान, धर्मज्ञ, सत्यसंध, आत्मसंयमी और लोकहितकारी। दूसरे स्तर पर वे विष्णु के अवतार हैं, जिनका प्राकट्य धर्म की रक्षा और अधर्म के विनाश के लिए होता है। तीसरे स्तर पर उत्तरवर्ती रामकाव्य परंपरा ने उन्हें परमब्रह्म के रूप में स्थापित करते हुए रामकथा को गहन आध्यात्मिक अर्थ प्रदान किया। राम के चरित्र की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसमें मानवता और दिव्यता का समन्वय है। वे ईश्वर होते हुए भी मनुष्य के आदर्श आचरण को प्रस्तुत करते हैं। उनका जीवन यह संदेश देता है कि धर्म केवल सिद्धांत नहीं, बल्कि व्यवहार है; सत्य केवल वचन नहीं, बल्कि जीवन–मूल्य है; और आध्यात्मिकता केवल ध्यान या ज्ञान नहीं, बल्कि लोकहितकारी आचरण भी है। इस प्रकार रामायण में ब्रह्मतत्त्व को केवल दार्शनिक परिभाषा के माध्यम से नहीं, बल्कि राम के सत्य, धर्म, आत्मसंयम, त्याग, कर्तव्य, लोककल्याण और अवतारी स्वरूप के माध्यम से समझा जा सकता है। यही रामायण की दार्शनिक एवं आध्यात्मिक प्रासंगिकता का मूल आधार है।

12. उपसंहार

रामायण भारतीय संस्कृति में केवल आदर्श जीवन की कथा नहीं, बल्कि आध्यात्मिक एवं दार्शनिक चिंतन का भी महत्त्वपूर्ण स्रोत है। इसमें ब्रह्मतत्त्व किसी अमूर्त दार्शनिक सिद्धांत के रूप में सीमित नहीं रहता, बल्कि श्रीराम के जीवन और आचरण में मूर्त रूप प्राप्त करता है। श्रीराम का चरित्र यह संदेश देता है कि परम सत्य की ओर जाने वाला मार्ग सत्य, धर्म, संयम, त्याग, सेवा और लोककल्याण से होकर गुजरता है। हनुमान की भक्ति जीव और ईश्वर के संबंध को स्पष्ट करती है, जबकि रावण का पतन अहंकार और अधर्म के परिणाम को दर्शाता है। अतः रामायण में ब्रह्मतत्त्व को धर्ममय जीवन, आत्मसंयम, भक्ति, ज्ञान और लोककल्याण के समन्वित दर्शन के रूप में समझा जा सकता है। यही कारण है कि रामायण का आध्यात्मिक संदेश भारतीय समाज में युगों से प्रासंगिक बना हुआ है।

13. संदर्भ

1. वाल्मीकि, रामायण, बालकाण्ड, सर्ग 1, श्लोक 1–4
2. वाल्मीकि, रामायण, बालकाण्ड, 1.1.12 – "धर्मज्ञः सत्यसन्धश्च प्रजानां च हिते रतः..."
3. तैत्तिरीय उपनिषद्, ब्रह्मानन्दवल्ली, 2.1.1 – "सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म"
4. वाल्मीकि, रामायण, बालकाण्ड, सर्ग 1, श्लोक 3–18
5. वाल्मीकि, रामायण, बालकाण्ड, सर्ग 15
6. वाल्मीकि, रामायण, बालकाण्ड, 1.15.31–32
7. वाल्मीकि, श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण, बालकाण्ड, सर्ग 15, विशेषतः 1.15.1–31
8. वाल्मीकि, श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण, किष्किन्धाकाण्ड, सर्ग 3–4
9. वाल्मीकि, श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण,सुंदरकाण्ड, सर्ग 35, श्लोक 1–6
10. वाल्मीकि, श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण,सुंदरकाण्ड, सर्ग 35–36
11. वाल्मीकि, श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण, किष्किन्धाकाण्ड, 4.44.17
12. वाल्मीकि, श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण, युद्धकाण्ड, सर्ग 6.16.1 तथा 6.16.27

How to Cite This Article

रामानुज, शुक्ला रेनू. वाल्मीकि रामायण में ब्रह्मतत्त्व : एक शोधपरक अध्ययन. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टी रिसर्च. 2026; 2(4): 135-138.

Creative Commons (CC) License

This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International (CC BY-NC-SA 4.0) License, which allows others to remix, tweak, and build upon the work non-commercially, as long as appropriate credit is given and the new creations are licensed under the identical terms.